लोक संस्कृति की तलाश शोध का अभिनव आयाम

डॉ. आर.पी. वर्मा,
एसो. प्रो. एवं अध्यक्ष हिन्दी विभाग,
राजकीय महाविद्यालय गोसाईखेड़ा,
जनपद–उन्नाव, उ.प्र.

हिन्दी भाषा का वर्तमान स्वरूप चार क्षेत्रीय बोलियों का सम्मिलित प्रयास है जिसमें 1. व्रजभाषा 2. अवधी 3. भोजपुरी 1. बुन्देली का पारस्परिक सामंजस्य परिलक्षित होता है, इन बोलियों में सर्वाधिक प्रतिष्ठित व्रजभाषा है जिसका सदियों तक हिन्दी काव्य जगत पर एकाधिकार रहा और लगभग सम्पूर्ण उत्तरी तथा मध्य भारत में विस्तार रहा। रचनाकार अन्य बोलियों में काव्य सृजन की कल्पना भी नहीं करते थे और व्रजभाषा ने भी हिन्दी काव्य की अपेक्षाओं को पूरा किया। सम्पूर्ण भक्तिकाल और रीतिकाल इसका साक्षी है जब यह विश्व साहित्य के समक्ष हिन्दी भाषा को यथेष्ट गौरवान्वित करेन में सफल रही। व्रजभाषा ने हिन्दी काव्य जगत् को घनानन्द, देव, पद्माकर, रसखान, बिहारी, केशव, मतिराम, अष्टछाप के भक्त कचि एंव वात्सल्य रस के जनक महाकवि सूरदास जैसे महात्मा दिए जो आज भी यथावत अपने दिव्य प्रकाश से काव्य प्रेमियों को रसप्लावित कर रहे है, इतना ही नहीं, संस्कृति के पश्चात् एक मात्र व्रजभाषा ही विदेशों तक अपना विस्तार करने में सफल सिद्ध हुई ब्रजभाषा की सहजता, मधुरता और लोच कवि को जीवन्त कर देती है तथा अपनी प्रवाहमयी छवि से उर्दू की खानी को चुनौती देती है हजारों वर्षों से अक्षम ऊर्जावान व्रजभापा में परस्पर संवाद भी काव्यभय प्रतीत होता है और लयवद्धता दिखाई पड़ती है, किन्तु व्रजभाषा व्रजक्षेत्र के अतिरिक्त अन्य प्रान्तों में काव्य की भाषा तो बनी, फिर भी ग्रामीण एंव दूरस्थ विछड़े क्षेत्रों में परस विचारों के आदान–प्रदान का माध्यम नहीं बन सकी। इसका प्रयोग काव्य तक ही सीमित रहा यद्यपि सौष्ठव, माधुर्य एंव प्रवाह की दृष्टि से यह बेमिसाल रहीं, ब्रजभाषा सदियों तक रसानंद प्रेमियों को जहाँ अपेक्षित रसपान कराती रही वहीं हिन्दी साहित्य में भी नये–नये प्रतिभाव स्थापित करती रही परन्तु व्रजक्षेत्र में ही लोकभाषा बन सकी। व्रजभाषा की आंचलिकता के साथ उसकी साहित्यिक स्थिति का भी प्रस्तुत शोध में मूल्यांकन तथा आंकलन किया है जिसमें व्रजभाषा की मुख्य प्रवृत्तियों, विशिष्टताओं तथा प्रमुख काव्यकृतियों का अनुशीलन एंव विश्लेषण सम्मिलित है, इसके साथ ही व्रजभाषा के लोक–तत्वों यथा–लोकविश्वास, तंत्र–मंत्र, अनुष्ठान, लोक कलाओं, लोक कथाओं एंव लोक व्यवहार का विशद् अध्ययन किया है, वस्तुतः उनके अध्ययन की मुख्य विषय–वस्तु लोक जीवन में व्याप्त लोक–संस्कृति एंव लोक साहित्य के माध्यम से उस विरास तथा परमाराओं के अनुशीलन करना है जो आंचलिक परिवेश को, आस्था और विश्वास को, लोककाव्य की अक्षुण्ण मान्यताओं को जीवन्त और ऊर्जावान रखता है। ब्रजभाषा को प्रबल चुनौती देने वाली, अवध की संस्कृति, सभ्यता परम्परा के साश्वत मूल्यों को जीवनी शक्ति प्रदान करती अवधि भी कम महत्व नहीं रखती यद्यपि ब्रजभाषा की भाँति उसका विस्तार नहीं हुआ किन्तु अपनी सीमित परिधि में भी अपनी विशेषताओं के फलस्वरूप वह फूलती–फलती रही और उससे भी ऐसे–ऐसे अमूल्य रत्नों की उत्पत्ति हुई जो विश्व साहित्य को प्रभावित करते हैं जायसी और तुलसी जैसे कालजयी रचनाकारों ने जहाँ साहित्य में सूर्य की भाँति दैदीत्यमान होकर हिन्दी का गौरव बढ़ाया वहीं समाज को भी सुचित दिशा देकर मानव मूल्यों का मार्ग प्रशस्त करते रहे। उत्तर प्रदेश के हृदय क्षेत्र में बोली जानेवाली यह भाषा, व्रजभाषा की भाँति ही साहित्यिक सम्पदा से सम्पन्न है और इसमें भी हर प्रकार के छन्दों की रचना की गयी है, तथा अपने समृद्ध साहित्य के समान ही लोक तत्वों से भरपूर है। अवधी भाषा में लोक विश्वास, लोककया, पर्व एंव अनुष्ठान, संस्कार, लोक व्यवहार तथा लोक मानस में सदियों से रची–बसी

परम्पराओं के सन्दर्भ में लोक तत्वों का अनुशीलन और विश्लेषण तटस्थ रह कर किया है, उनकी कभी यह चेष्टा नहीं रही कि उनके शोध से किसी भाषा की गरिमा को आघात पहुँचाया जाये, अवधी भाषा के अध्ययन क्रम में भी उन्होंने प्रमुख काव्य–कृति भाषा की प्रवृत्तियों, उसकी विशेषताओं तथा आधुनिक परिवेश में उसकी सक्रियता को भी शोध में स्थान दिया है जिससे यह शोधग्रन्थ भाषा के सम्पूर्ण उद्‌भव, विकास तथा उसकी अविरल परम्परा का आख्यान बनवाया है और भविष्य में भी महत्वपूर्ण शोधग्रन्थों में स्थान पाकर सन्दर्भ के उपयोग में आयेगा, व्रजभाषा काव्य का जहाँ मुख्य प्रेरक स्रोत कृष्ण की बहुआयामी रागात्मक चरित्र है वहीं अवधी भाषा काव्य का मुख्य प्रेरक स्रोत मर्यादा पुरुषोत्तम राम का कर्तव्य परायण चरित्र है, व्रजभाषा काव्य में प्रमुख रूप से वात्सल्य एंव श्रृंगार पर विशेष ध्यान दिया गया जबकि अवधी भाषा काव्य में वीर एंव शांत रस पर अधिक सृजन हुआ, एक ओर महाकाव्य रचे गये तो दूसरी ओर लोकमानस को रिझाने वाले फुटकर पदों की रचना की गयी। तात्पर्य यह कि दोनों भाषाओं का तुलनात्मक अध्ययन समानता को आधार पर इस शोध में प्रस्तुत किया गया है तथा अभूतपूर्व एंव मौति है, यों तो इस शोध का विषय दोनो भाषाओं के उद्‌भव से लेकर सम्पूर्ण विकास यात्रा तया वर्तमान स्थिति का पूरी तरह अनुशीलन किया है। व्रजभाषा तथा अवधी दोनों के प्राचीन रचनाकारों का गहरा अध्ययन किया। ब्रजभाषा के प्राचीन कवियों की प्रमुख काव्यकृतियों के विश्लेषण से उस काल की विशेषताओं का अनुशीलन किया और बिन्दुवार उनकी व्याख्या की जो निम्नांकित हैं–1. भक्ति भावना 2. श्रृंगारिकता 3. संगीतात्मकता 4. भ्रमरगीत परम्परा 5. लक्षण ग्रन्थ परम्परा 6. नीति काव्य 7. प्रकृति चित्रण 8. अनूदित काव्य 9. रसात्मकता 10. छन्द सौष्ठव 11. युगबोध 12. समस्यापूर्ति, इनमें प्रत्येक विन्दु ऐसा है कि जिस पर पृथक् रूप से ग्रन्थ लिखा जा सकता है , आधुनिक व्रजभाषा काव्य के विश्लेषण के अंतर्गत जगन्नाथ दास रत्नाकर द्वारा रचित, उद्धव शतक डॉ. रामशंकर शुक्ल रसाल द्वारा रचित उद्धव शतक, गजेन्द्र नाथ चतुर्वेदी द्वारा रचित उद्धव शतक, डॉ. किशोरी लाल गुप्त द्वारा रचित उराहनी तथा डॉ. प्रकाश द्विवेदी द्वारा रचित पारावार व्रज कौ का गहरा अध्ययन किया है और मुख्य प्रवृत्तियों की जाँच–परख की है और विस्तृत रूप से विश्लेषण भी किया है, उन्होंने अर्थ से इति तक अनेक अतिरिक्त काव्य–कृतियों एव आलोचनात्मक ग्रन्थों का भी संदर्भ तथ्यों का प्रामाणिकता हेतु अपने शोध में प्रस्तुत किया है जिससे उनका साघना एंव आकलन पर संदेह नहीं रहा जाता। प्रत्येक रचनाकार की प्रमुख काव्य–कृति का अध्ययन कर उसकी प्रवृत्तियों और वस्तुगत एंव शिल्पगत विशेषताओं की पहचान के साथ ही उसमें अनुस्यूत संदर्भ से लोक तत्त्वों की खोज की जिसके अंतर्गत लोक विश्वास, अनुष्ठान, तंत्र–मंत्र, लोक कलायें, लोकाचार तथा लोक कथाओं की गहरी छायवी–की है जिससे उनके आधार पर पुनरीक्षण और तुलनात्मक विश्लेषण की आधार शिला रखी जा सके। व्रजभाषा के प्रमुख आधुनिक रचनाकारों की भाँति ही अवधी काव्य के श्रेष्ठ पाँच रचनाकारों की मुख्य काव्य कृतियों में लोकतत्त्वों को खोजने का सफल प्रयास किया है जिसमें बलभद् प्रसाद दीक्षित पदीस की काव्य कृति चकल्लस, वंशीधर शुक्ल की काव्य–कृति आल्हा सुमिरनी, गुरु प्रसाद सिंह की काव्य–कृति पारिजात चन्द्रभूषण त्रिवेदी रमई काका की काव्य–कृति बौछार तथा आचार्य विश्वनाथ पाठक की काव्य–कृति सर्वमंगला का अध्ययन किया और प्रत्येक काव्य कृति की वस्तुगत–शिल्पगत विशेषताओं की पहचान करते हुए उनमें से मुख्य प्रवृत्तियों के छः लोकतत्त्वों के अन्तर्गत लोक विश्वास, अनुष्ठान, तंत्र–मंत्र, लोक कलाओं लोकाचार तथा लोक कथाओं के संदभों की छानबीन कर के निर्धारित विषय के सम्बन्ध में पुनरीक्षण एवं तुलनात्मक अध्ययन की भूमि तैयार की है।

वर्तमान बौद्धिक युग में प्राचीन परम्पराओं तथा जीवन मूल्यों के प्रति लोगों की रुचि समाप्त होती जा रही है। समाज भारतीय सांस्कृति रीति रिवाजों एंव युगों से चलती आ रही लोक रंजनी सामूहिक व्यवस्था के स्थान पर पाश्चात्य संस्कृति एवं सभ्यता को श्रेष्ठ मानकर अनुकरण कर रहा है। सम्पूर्ण समाज को रसातल की ओर पतन के मार्ग पर ले जाने में सहायक सिद्ध हो रहा है। ऐसी स्थिति में अपनी संस्कृति की जड़ों की तरफ उन्मुख होने की प्रबल आवश्यकता है। अतिचेतना

बुद्धिजीवी वर्ग अतीत में झाँकना नहीं चाहता और वर्तमान को ही जीवन का यथार्थ समझता है। उस एकांगी दृष्टि भारतीय सर्वोच्च सांस्कृतिक पद्धति को निरर्थक मानती है जिसे पाश्चात्य देश अनुकरणीय मानते है। इस संदर्भ में दृष्टव्य है कि रीतिकाल से पूर्व व्रजभाषा साधारण जन की भाषा थी जिस लोक तत्त्वों की प्रचुर मात्रा की और लोक गीतो का प्रचलन था जहाँ तत्काल रीति–रिवाज, धार्मिक पर्व, सांस्कृतिक उत्सव, लोक व्यवहार, सामाजिक अनुष्ठान, लोक व्यवहार तथा व्यक्तिगत दुःख–सुख के साथ संतों के भजन आदि का महत्वपूर्ण स्थान था। किन्तु रीतिकाल में व्रजभाषा राज्याश्रयी कवियों का काव्य भाषा के रूप में प्रतिष्ठित हो गयी जिसके फलस्वरूप यह विद्वानों के मनोविनोद में फस कर लोक तत्त्वों को उपेक्षित करने लगी। रीतिकाल में केवल श्रृंगार के अन्तर्गत नायिका भेद और नख–शिख वर्णन में व्यक्तिगत संयोग–वियोग में सीमित होने लगी यद्यपि राज्याश्रय के फलस्वरूप क्षेत्रीयता और आंचलिक परिधि को छोड़ कर अपना विकास एवं विस्तार करने में सफल रही, तथा अन्य भाषाओं के शब्दों को भी ग्रहण कर व्यापक बनी। यह क्रम भारतेन्दु युग तक अबाध रूप से चलता रहा और इस अवधि में विहारी, मतिराम, सेनापति, प द्माकर, मिखारी दास, देव, धनानन्द, रसलीन एव केशव आदि कवियों ने हिन्दी साहित्य की समृद्धि में योगदान दिया।

इस शोध के अंतर्गत भौगोलिक, ऐतिहासिक तया साहित्यिक तथ्यों का अन्वेषण करते हुए पाया कि ब्रजभाषा की भौगोलिक सीमा पर विद्वानों में बहुत विवाद है। यो तो व्रज का अर्थ है गौस्थती उसकी सीमा मथुरा के आस–पास चौरासी कोस तक मानी जाती है, और उसे ब्रजमण्डल कहा जाता है, किन्तु मतभेद के कारण सुनिश्चित् कर पाना इतना सरल नहीं है। विदेशी विद्वान ग्रियर्सन इसे मध्य वेद की आदर्श भाषा मानते हुए मथुरा, आगरा, धौलपुर, भरतपुर तथा कटौली साथ ही ग्वालियर का पश्चिमी भाग, और जयपुर के पूर्वी भाग तक, उत्तर में गुड़गाँव के पूर्वी भाग तक, उत्तर पूर्व में दो अब तक, जिसमें बुलन्दशहर अलीगढ़, एटा तथा गंगा पार बदायूँ, बरेली और नैनीताल की तराई का पूरा भाग सम्मिलित है किन्तु डॉ. धीरेन्द्र वर्मा के अनुसार उत्तर प्रदेश में पीलीभीत, शाहजहाँपुर, फरूखाबाद, हरदोई, इटावा, और कानपुर भी व्रज भाषा क्षेत्र के अन्तर्गत ही आता है किन्तु मुख्य रूप से मथुरा, आगरा एटा तथा धौलपुर आदि जनपदों में इसका शुद्ध रूप पाया जाता है और ग्रामीण अंचल में भी संवाद का माध्यम है, यों तो व्रजभाषा सदियों से राजाओं–महाराजाओं से लेकर आम जनता को अपनी विशेषताओं के कारण मोहित करती रही है फिर भी काव्य की भाषा अथवा भाषा मणि के रूप में इसकी प्रतिष्ठा पूरे उत्तर और मध्य भारत में व्याप्त रही। शौरसेनी अपभ्रंश से विकसित व्रजभाषा श्प्रधा तम भाषाश के गौरव से विभूषित की गयी। डॉ. सुनीति कुमार चादुर्यां ने इसके इतिहास पर विशेष रूप से प्रकाश डाला है। श्री राधा चरण गोस्वामी ने और भिखारीदास आदि रीतिकालीन आचार्यों ने व्रजभाषा का विस्तार सुदूर महाराष्ट्र, गुजरात, पंजाब, आसाम, बंगाल, कश्मीर, केरल, कर्नाटक तथा आन्ध्र प्रदेश तक सप्रमाण सिद्ध किया है, व्रजेतर क्षेत्र के कवियों ने भी व्रजभाषा में काव्य रचनाओं की हैं। अवधी क्षेत्र की सुप्रसिद्ध कवियों का उद्धरण भी दिया है जिनमें मलूकदास, मुबारक, नरोत्तम दास चिन्तामणि, भिखारी दास, तोषनिधि, रसलीन, बेनी, प्रवीन ठाकुर आदि मध्यकालीन तथा ललित किशोरी, ललित माधुरी, गया प्रसाद शुक्ल सनेही डॉ. किशोरी लाल गुप्त, अनूप शर्मा, बचनेश मित्र, हर दयालसिंह, ब्रजनंदन, राम नाव ज्योतिषी, डॉ. लक्ष्मीशंकर मिश्र शनिशेक डॉ. राजेश दयाल श्राजेशश तथा डॉ. प्रकाश द्विवेदी आदि का उल्लेख किया है, इसके अतिरिक्त बुन्देल खण्ड से गोस्वामी तुलसीदास, आचार्य केशवदास, विहारी, प्रवीण राव, आन्ध्रप्रदेश–तेलंगाना से पद्यांकर, खड़ी बोली क्षेत्र से रहीम, घनानंद नाथ रसखान आदि, गढ़वाल से भोलाराम, भोजपुरी, भगही, मैथिली आदि के क्षेत्र से कबीर, सेवक, राम सहायदास, भारतेन्दु, दीनदयाल गिरि, अम्बिका दत्त व्यास, हरिऔध एंव छायावाद के शिखर जयशंकर प्रसाद आदि, महाराष्ट्र से संत नामदेव, संत ज्ञानेश्वर तथा एकनाय और भूषण, गुजरात कवि आलठा, नरसी मेहता तथा अष्टछाप के कवि कृष्ण दास, पंजाब से सैकड़ों सिख कवियों ने काव्य के लिये व्रजभाषा का ही चुनाव किया, सिम्ख सम्प्रदाय के गुरुओं ने यथा नानक देव, गोविन्द सिंह, तारासिंह

आत्मासिंह, साधूसिंह आदि और राजस्थान से मीराबाई, महाराजा जसवन्त सिंह, जम्मू से राजपुरोहित दत्तू, बंगाल से ब्रजबुलि के रूप में प्रचलित जिसमें वासुदेव घोष, संत हरिदास परमानन्द, शानदास, गोविन्ददास और रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने भी व्रजबुलि में रचना की, असम से कवि शंकरदेव, माघव देव आदि, केरल से महाराज राम वर्मा आदित्य शाह द्वितीय तथा इब्राहिम आदिलशाह आदि कवियों को उल्लेख है। जहाँ–जहाँ भी कृष्ण भक्ति गयी, गायन की परम्परा गयी, संतों की वाणी गयी वहाँ–वहाँ व्रजभाषा का विस्तार हुआ। इस सम्बन्ध में स्वामी वल्लभाचार्य का भी उन्होंने उल्लेख किया है। संगीत के आचार्यों एवं संतों के पदों ने व्रजभाषा को वह गौरव प्रदान किया जो अन्य क्षेत्रीय भाषाओं के लिए दुर्लभ रहा। इस काव्य परम्परा को सुचारु रूप से समझने के लिये उन्होंने इसे तीन खण्डों में विकास के आधार पर विभाजित किया–1. प्रांरभिक काल 2. मध्ययुगीन काल 3. आधुनिक काल। प्रारम्भिक काल के अंतर्गत डॉ. वर्मा ने डॉ. सुनीति कुमार चाकुर्ष्या, डॉ. शिवप्रसाद सिंह, डॉ. रामकुमार वर्मा, डॉ. कृष्ण कुमार सिन्हा, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल तथा डॉ. ग्रियर्सन आदि विद्वानों के विषय सम्बन्धित विचारों का अनुशीलन किया है और अपने कथन को सप्रमाण सिद्ध किया है, मध्यकाल को भी उन्होंने दो खण्डों में विभाजित किया है–प्रथम–भक्तिकाल, द्वितीय–रीतिकाल भक्तिकाल जहाँ संतों की विशिष्ट परम्पराओं के फलस्वरूप व्रजभाषा का व्यापक प्रचार–प्रसार–विस्तार किया वहाँ रीतिकाल में देश की धन–धान्य समान्नता, शांतिपूर्ण व्यवस्था एंव उत्तर सुशासन के फलस्वरूप वैभव–विलास का प्राधान्य रहा, व्रजभाषा साहित्य राज्याश्रयी कवियों के कारण श्रृंगरिक रचनाओं एवं भाषा के चमत्कार से भरा हुआ है जिसमें भाषायी शिल्प एवं कलात्मकता शिखर पर पहुंच गया जिससे रीतिकाल को स्वर्णयुग कहा जाता है, शोधकर्ता की दृष्टि व्रजभाषा के प्रत्येक पक्ष पर गयी है और ऐतिहासिक तथ्यों का उन्होंने बड़े मनोयोग एवं श्रम से विश्लेषण किया है जो सटीक है, आधुनिक काल में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र से लेकर सेवक, महाराज रघुराज सिंह, सरकार, रघुनाथदास, सनेही, ललित किशोरी, ललित माधुरी, लछिराम, नवनीत चौबे, प्रतापनारायण मिश्र, बदरी नारायण प्रेमघन ठाकुर, जगमोहन सिंह, अम्बिका दत्त व्यास आदि कवियों ने महत्वपूर्ण योगदान दिया और बीसवीं शताब्दी में भी वह काव्यधार निरनार प्रवाहित रही जिसमें रत्नाकर, हरिऔंध, सत्यनारायण कविरत्न वियोगी हरि, वचनेश आदि ने व्रजभाषा को निखार दिया। अब भी व्रजभाषा साधना सम्पन्न रचनाकारों की लेखनी से अविरत्न भावधारा निःसृत हो रही है।

पूर्ववर्ती कवियों की प्रवृत्तियों के अध्ययन में उन्होंने वस्तुगत एवं शिल्पगत दोनों दृष्टियों से रचनाशीलता का अनुशीलन तथा विश्लेषण किया है और साथ ही जगन्नाथ दास रत्नाकर का श्उद्धव शतकश डॉ. राम शंकर शुक्ल रसाल का उद्धवशतक गजेन्द्र नाथ चतुर्वेदी का उद्धवशतक डॉ. किशोरी लाल गुप्त का उराहनी, और डॉ. प्रकाश द्विवेदी का पारान्तर व्रज कीश कुल पाँच उत्कृष्ट कवियों की कृतियों की कृतियों से लोकतत्त्व से सम्बन्धित विशेषताओं का का विश्लेषण किया है और उसके चिन्तमनन से जो तथ्य प्राप्त किये वे उनके शोध का लक्ष्य पूर्ण करते हैं। यद्यपि निर्धारित विषय क्लिष्ट दी नहीं, विस्तारपरक भी है किन्तु अन्त उन्होंने संकल्प को पूर्ण किया, जिस मनोयोग से निरंतर जटिलतम समस्या से जूझते रहने के वावजूद उन्होंने गंभीर अध्ययन एंव स्वाध्याय को गतिशील रखा यह वास्तव में उसके संघर्षशील जिजीविषा का संशन कराती है। व्रजभापा भाषा काव्य के माध्यम से आधुनिक काल के कवियों की रचनाओं में अनुस्यूत लोक विश्वास, लोकाचार, लोककथायें, लोक कलायें, अनुष्ठान, तंत्र–मंत्र और लोक प्रचलित मुहावरों, लोकोक्तियों आदि के सम्बन्ध में भी विश्लेषण कर निष्कर्ष निकाला है जो अद्भुत एंव ज्ञान चक्षु खोलने वाला है, उन अध्ययन का फलक व्यापक एंव विस्तृत है जिसमें व्रजभाषा की विशेषताओं का भी ज्ञान होता है, लघु लोक गीतों से लेकर दीर्घकाय पवाँरो यथा आल्हढोला आदि का समवेत प्रसार व्रजभाषा को लोक तत्वों से समृद्ध करता है, जिसमें पहेलियों तथा कहावतों का सटीक प्रयोग काव्य को नयी ऊँचाई देने में सक्षम सिद्ध होता है, बौद्धिक रूप से सम्पन्न यह भाषा बुद्धि विलास के साथ चमत्कारों से भी समन्वय स्थापित करती अनेक विधाओं के माध्यम से सामाजिक परिवेश की सूक्ष्म एंव मनोरम–झाँकी

प्रस्तुत करती है जो हिन्दी भाषा की रीढ़ है, व्रजभाषा लोक काव्य समाज का धार्मिक पक्ष भी सशक्त रूप से प्रस्तुत किया गया है, जिसमें विभिन्न मत–मतान्तरों के आचार्यों ने अपने सैद्धान्तिक दृष्टि को बड़ी सहजता से संप्रेषित किया है विशेष रूप से स्मार्त, वैष्णव, द्वैव वादी अद्वैतवादी आदि अनेक धार्मिक आस्थाओं एंव विश्वासों को विस्तृत वर्णन व्रज के लोकसाहित्य में प्रचुरता से उपलब्ध है, स्थानीय देवी–देवताओं व्रत–अनुष्ठानों, भूत–प्रेत, जादू–टोना, शकुलो पशकुन सम्वन्धी लोक–गीत कथाओं एंव गथाओं का गायन इसमें मोहक रूप से उपलब्ध है, वैष्णव की आस्था–विश्वास के प्रतीक शिव, राम, कृष्ण, हनुमान आदि की उपासना की साथ सूफी संतों की दरगाहों आदि में भी ग्रामीण, समाज मान–मनौती, पूजन वार्षिक चढ़ावा आदि बिना भेद–भाव के, करता और मानता है, लोक में प्रचलित विश्वासों, जादू–टोना आदि को भी मान्यता प्राप्त है, जो साहित्य में नीतिपरक कथाओं एवं लोकोक्तियों उच्चतम एंव निम्नतम समव्यावहारिक रूपों का प्रयोग प्रचलित है जिनकी सैद्धन्तिकता के आधार पर ही आय जनता की जीवन पद्धति निर्धारित होती है, किन्तु यह खेद के विषय है कि इलेक्ट्रनिक उपकरणों यथाः रेडियो, टी.वी. चलचित्र आदि मनोरंजन–माध्यमों के प्रसार से व्रज लोक साहित्य की सांस्कृतिक मेघा का तीव्रगति से क्षरण हो रहा है और यहाँ तक कि संस्कार लोक गीतों के स्थान पर चलचित्र के भोंडे गाने प्रारम्भ हो गये हैं, जो हमारे ग्राम्य जन–जीवन को विकृत कर रहे है, इस शोध कार्य द्वारा सिद्ध किया है, कि आधुनिक व्रज काव्य का साहित्य असंख्य बहुमूल्य रत्नों से समृद्ध महासागर है और वर्तमान में लोक गायक, रचनाकार, लेखक एवं साहित्य–मर्मज्ञ लोक साहित्य के प्रति पूर्ण–रूपेण जागरूक हैं और इस अनमोल लोक चेतना के संरक्षण–संवर्द्धन के लिये कृत–संकल्प हैं जिससे प्रतीत होता है कि व्रजभाषा लोक–काव्य का भविष्य सुरक्षित ही नहीं, उज्ज्वल भी है।

सन्दर्भ

- हिंदी साहित्य का इतिहास–आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, पृ. 95 ।
- हिंदी साहित्य की वस्तुपरख इतिहास–डॉ राम प्रसाद मिश्र, पृ. 82
- हिंदी साहित्य का वस्तुपरख इतिहास–राम प्रसाद मिश्र, पृ. 155
- साहित्य और समाज का एक मूल्यांकन–डॉ. राजीव शर्मा, पृ. 125
- आधुनिक समाज में साहित्य और समाज की भूमिका–प्रो. राजकुमार कुरील, पृ. 25
- साहित्य समाज का अवधारणा–डॉ चित्रलेखा, पृ. 95
- हिंदी साहित्य का इतिहास – रामचन्द्र शुक्ल, पृ. 61
- हिंदी साहित्य का इतिहास – लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय, पृ. 139
- हिंन्दी साहित्य का संक्षिप्त इतिहास–लक्ष्मी सागर वार्ष्णेय, पृ. 119
- आधुनिक हिंदी साहित्य का इतिहास – बच्चन सिंह, पृ. 138